



अध्याय ११

# विश्वरूपदर्शन योग



अर्जुन उवाच ।  
मदनुग्रहाय परमं गुह्यमध्यात्मसंज्ञितम् ।  
यत्त्वयोक्तं वचस्तेन मोहोऽयं विगतो मम ॥ ११-१ ॥

अर्जुन ने कहा - अपनी अनुकंपा से, आपने दिव्य स्वभाव के अत्यन्त गुह्य आध्यात्मिक रहस्य को बताया, जिसे सुनकर अब मेरा मोह दूर हो गया है।

भवाप्ययौ हि भूतानां श्रुतौ विस्तरशो मया ।  
त्वत्तः कमलपत्राक्ष माहात्म्यमपि चाव्ययम् ॥ ११-२ ॥

हे कमल-नयन कृष्ण, मैंने आपसे सभी जीवों की उत्पत्ति एवं विनाश का विस्तृत वर्णन सुना, साथ ही साथ आपकी अविनाशी महिमा को भी सुना।

एवमेतद्यथात्थ त्वमात्मानं परमेश्वर ।  
द्रष्टुमिच्छामि ते रूपमैश्वरं पुरुषोत्तम ॥ ११-३ ॥

हे परमेश्वर! जो आपने अपने बारे में बताया है वह परम सत्य है। हे पुरुषोत्तम, अब मैं आपके वैभवशाली रूप के दर्शन की इच्छा करता हूँ।

मन्यसे यदि तच्छक्यं मया द्रष्टुमिति प्रभो ।  
योगेश्वर ततो मे त्वं दर्शयात्मानमव्ययम् ॥ ११-४ ॥

हे योगेश्वर! यदि आपको लगता है कि यह संभव है, तो कृपया मुझे अपना अव्यय स्वरूप दिखाएं।

~ अनुवृत्ति ~

अध्याय दस के अंत में, अर्जुन पूरी तरह से आश्वस्त हो जाता है कि श्रीकृष्ण परम पुरुष, भगवान् हैं, और यह सारी सृष्टि उन्हीं से प्रकट होती है, और विनाश के बाद उन्हीं में समा जाती है। ताकि भविष्य में आने वाली पीढ़ियां गलती से यह न समझे कि श्रीकृष्ण कोई साधारण व्यक्ति या केवल एक दार्शनिक थे, इसलिए अर्जुन ने श्रीकृष्ण से अपने विश्वरूप को प्रकट करने का आग्रह किया - श्रीकृष्ण का वह रूप जिसमें सम्पूर्ण जगत् समाहित है। यह रूप किसी के स्वातंत्र प्रयास से नहीं देखा जा सकता है, और यह पूर्ण रूप से श्रीकृष्ण की कृपा पर ही निर्भर करता है की अर्जुन उसे देख सकते हैं की नहीं।

अर्जुन भी जानते हैं कि भविष्य में अनैतिक एवं विवेकहीन व्यक्ति स्वयं को भगवान् होने का दावा करेंगे और अज्ञानी लोगों को गुमराह करेंगे। इसलिए, अर्जुन चाहते हैं कि कृष्ण अपने विश्वरूप को मानदण्ड के रूप में प्रदर्शित करें ताकि कोई भी व्यक्ति जो भगवान् होने का दावा कर रहा हो, अपनी स्थिति की पुष्टि करने के लिए उसे विश्वरूप दिखाने में सक्षम होना चाहिए।

सचमुच, अर्जुन की दूरदर्शिता सटीक थी। श्रीकृष्ण के समय से, और विशेष रूप से आधुनिक समय में, कई तथाकथित आध्यात्मिक गुरुओं ने समाज में कदम रखा है और स्वयं को कृष्ण या भगवान् के अवतार होने का दावा किया है। दुर्भाग्य से, जन मानस इतने अज्ञानी है कि ऐसे पाखंडी एवं ढोंगियों को स्वीकार करते हैं। जब व्यक्ति स्वयं को भगवान् होने का दावा करता है, या जब कोई व्यक्ति किसी अन्य मनुष्य को भगवान् के रूप में स्वीकार करता, तब सबसे बड़ी दुर्गति उस पर आ पड़ती है। निस्संदेह यह सबसे गहरा अज्ञान है। इशोपनिषद् इस प्रकार चेतावनी देता है -

अन्यं तमः प्रविशन्ति येऽविद्यामुपासते ।  
ततो भूय इव ते तमो य उ विद्यायां रताः ॥

जो लोग अविद्या (निराधार वस्तुओं) की पूजा में संलग्न होते हैं, वे अज्ञान के सबसे अंधेरे क्षेत्र में प्रवेश करते हैं। किंतु जो विद्या संपन्न होकर भी भी दूसरों का उचित मार्गदर्शन नहीं करते, वे अंधकार के और भी गहरे क्षेत्र में प्रवेश करते हैं। (इशोपनिषद् ९)

अर्जुन ने श्रीकृष्ण को परम पुरुष (परमेश्वर) और सभी योगिक शक्तियों के स्वामी (योगेश्वर) के रूप में संबोधित किया है, क्योंकि अर्जुन जानते हैं कि श्रीकृष्ण उन्हें अपना विश्वरूप दिखाने में सक्षम होंगे और इस प्रकार सदा के लिए श्रीकृष्ण के भगवान् होने और पाखंडियों के बीच का अंतर स्थापित हो जाएगा।

श्रीभगवानुवाच ।  
पश्य मे पार्थ रूपाणि शतशोऽथ सहस्रशः ।  
नानाविधानि दिव्यानि नानावर्णाकृतीनि च ॥ ११-५ ॥

भगवान् श्रीकृष्ण ने कहा - हे पार्थ, अब तुम मेरे विविध रंगों व आकृतियों वाले असंख्य दिव्य रूपों को देखो।

पश्यादित्यान्वसूत्रुदानश्चिनौ मरुतस्तथा ।  
बहून्यदृष्टपूर्वाणि पश्यश्चर्याणि भारत ॥ ११-६ ॥

हे भारत, देखो इन आदित्यों, वसुओं, रुद्रों, अश्विनीकुमारों तथा अन्य देवताओं को। इन विविध अद्भुत रूपों को देखो, जो पहले कभी देखे नहीं गए।

इहैकरथं जगत्कृत्स्नं पश्याद्य सच्चराचरम् ।  
मम देहे गुडाकेश यच्चान्यद् द्रष्टुमिच्छसि ॥ ११-७ ॥

हे अज्ञान की निद्रा के विजयि अर्जुन! एक ही स्थान पर मेरे इस रूप में पूरे ब्रह्मांड को देखो, जिसमें सभी चर-अचर प्राणी शामिल हैं, तथा उसके साथ तुम जो भी देखने की इच्छा रखते हो उसे भी देखो।

न तु मां शक्यसे द्रष्टुमनेनैव स्वचक्षुषा ।  
दिव्यं ददामि ते चक्षुः पश्य मे योगमैश्वरम् ॥ ११-८ ॥

किन्तु तुम मुझे अपनी इन आँखों से नहीं देख सकते। अतः मैं तुम्हें दिव्य दृष्टि दे रहा हूँ। अब मेरे योग ऐश्वर्य एवं वैभव को देखो।

~ अनुवृत्ति ~

यदि कोई अपनी आँखों से या आधुनिक दूरबीन द्वारा अंतरिक्ष में देखे, तो उसे विश्वरूप देखने की उम्मीद नहीं करनी चाहिए, जैसा कि अर्जुन को दिखाया गया था। इस भौतिक शरीर की आँखों से विश्वरूप को देखना संभव नहीं है। ऐसी दृश्य देखने के लिए जैसा कि अर्जुन को प्राप्त होना था, दिव्य दृष्टि की जरूरत है। दूसरे शब्दों में, अर्जुन का विश्वरूप दर्शन व्यक्तिगत था और केवल श्रीकृष्ण द्वारा ही प्रकट किया जा सकता था।

उस दृश्य में अर्जुन एक ही स्थान में वह सब कुछ देख पा रहा था, जो अब है, जो पहले था, जो कुछ भविष्य में होने वाला है, सभी चर व अचर वस्तुएं, और यह सब एक ही पल में। जैसा कि हम इस अध्याय में देखेंगे, श्रीकृष्ण के विश्वरूप को देखने के बाद, जिसे अर्जुन अद्भुत, आश्र्वर्यजनक, प्रज्वलित, भयानक और विनाशकारी बताते हैं, और भयभीत होकर श्रीकृष्ण को एक बार फिर से उन्हें परम पुरष के रूप में अपना आकर्षक और सुंदर रूप दिखाने के लिए कहते हैं।

## श्रीमद्भगवद्गीता

**सञ्जय उवाच ।**  
**एवमुत्त्वा ततो राजन्महायोगेश्वरो हरिः ।**  
**दर्शयामास पार्थीय परमं रूपमैश्वरम् ॥ ११-९ ॥**

संजय ने कहा - हे महाराज धृतराष्ट्र, इस प्रकार पार्थ से बात करके, महायोगेश्वर श्रीकृष्ण ने अर्जुन को अपने विश्वरूप का ऐश्वर्य दिखलाया।

**अनेकवक्रनयनमनेकाद्भुतदर्शनम् ।**  
**अनेकदिव्याभरणं दिव्यानेकोद्यतायुधम् ॥ ११-१० ॥**  
**दिव्यमाल्याम्बरधरं दिव्यगन्धानुलेपनम् ।**  
**सर्वाश्र्वर्यमयं देवमनन्तं विश्वतोमुखम् ॥ ११-११ ॥**

श्रीकृष्ण ने असंख्य मुखों और असंख्य नेत्रों वाले अपने रूप को प्रकट किया, जो कई दिव्य आभूषणों से अलंकृत और कई दिव्य अस्त्रों से सुशोभित था। उनका रूप दिव्य मालाओं और वस्त्रों से अलंकृत और दिव्य सुगंध से अभ्यंजित था। वह सबसे अद्भुत, भव्य, असीमित और सर्वव्यापी था।

**दिवि सूर्यसहस्रस्य भवेयुगपद्मित्थिता ।**  
**यदि भाः सदृशी सा स्याद्भासस्तस्य महात्मनः ॥ ११-१२ ॥**

यदि आकाश में असंख्य सूर्य एक साथ उदय हो, तो उनका प्रकाश संभवतः परमपुरुष के इस विश्वरूप के तेज के सदृश हो सकता है।

**तत्रैकस्थं जगत्कृत्वं प्रविभक्तमनेकधा ।**  
**अपश्यदेवदेवस्य शरीरे पाण्डवस्तदा ॥ ११-१३ ॥**

उस समय, पांडु पुत्र अर्जुन ने, देवों के देव श्रीकृष्ण के विश्वरूप में सम्पूर्ण जगत को देखा।

**ततः स विस्मयाविष्टो हृष्टरोमा धनञ्जयः ।**  
**प्रणम्य शिरसा देवं कृताञ्जलिरभाषत ॥ ११-१४ ॥**

इस तरह, विस्मय से अभिभूत होते हुए अर्जुन के रोंगटे खड़े हो गए, और उन्होंने अपने हाथ जोड़कर श्रीकृष्ण को अपना अभिवादन अर्पित करते हुए कहा।

अर्जुन उवाच ।

पश्यामि देवांस्तव देव देहे सर्वास्तथा भूतविशेषसञ्जान् ।  
ब्रह्माणमीशं कमलासनस्थमृषीश्च सर्वानुरगांश्च दिव्यान् ॥ ११-१५ ॥

अर्जुन ने कहा - हे स्वामी, मैं आपके शरीर के भीतर समस्त देवी-देवताओं और अन्य विविध जीव-राशियों को देख रहा हूँ। मैं कमल पर आसीन ब्रह्माजी और शिवजी, ऋषियों, एवं दिव्य साँ को देख रहा हूँ।

अनेकबाहूदरवक्ञनेत्रं पश्यामि त्वां सर्वतोऽनन्तरूपम् ।  
नान्तं न मध्यं न पुनस्तवादिं पश्यामि विश्वेश्वर विश्वरूप ॥ ११-१६ ॥

हे विश्वेश्वर! मैं असंख्य भुजाओं, उदर, मुंह तथा आँखों वाले आपके असीमित रूप को देख रहा हूँ। मुझे आपके इस विश्वरूप का कोई आरंभ, मध्य एवं अंत नहीं दिखाई दे रहा है।

किरीटिनं गदिनं चक्रिणं च तेजोराशिं सर्वतो दीसिमन्तम् ।  
पश्यामि त्वां दुर्निरीक्ष्यं समन्ताद् दीप्तानलार्कद्युतिमप्रमेयम् ॥ ११-१७ ॥

मैं आपके रूप को सर्वत्र देख रहा हूँ, जो अनेक मुकुटों, गदाओं तथा चक्रों से विभूषित है, और सूर्य के अपार प्रकाश की भाँति आपके सभी ओर से व्यापक तेज दीप्तिमान है, जिसके कारण आपको देख पाना कठिन है।

त्वमक्षरं परमं वेदितव्यं त्वमस्य विश्वस्य परं निधानम् ।  
त्वमव्ययः शाश्वतधर्मगोप्ता सनातनस्त्वं पुरुषो मतो मे ॥ ११-१८ ॥

आप वेदों द्वारा ज्ञात परम सत्य हैं। आप इस जगत के परम आधार हैं। आप धर्म के अविनाशी रक्षक हैं। आप ही परम पुरुष भगवान् हैं, यही मेरा मत है।

अनादिमध्यान्तमनन्तवीर्यमनन्तबाहुं शशिसूर्यनेत्रम् ।  
पश्यामि त्वां दीप्तहुताशवक्ञं स्वतेजसा विश्वमिदं तपन्तम् ॥ ११-१९ ॥

मैं देख रहा हूँ कि आप आदि, मध्य तथा अन्त से रहित हैं। आपके पास असीमित शक्ति और असंख्य बाहु हैं। सूर्य और चंद्रमा आपकी आखें हैं। आपके मुख से प्रज्वलित अग्नि की भाँति निकलते किरणों से सम्पूर्ण विश्व झुलस रहा है।

~ अनुवृत्ति ~

श्रीकृष्ण का विराटरूप उन्हें देखने वालों में अत्यंत विस्मय और स्तुति गान जागृत करता है, लेकिन वास्तव में, कृष्ण के भक्त इस तरह के दर्शन से आकर्षित नहीं होते हैं। विस्मय एवं आदर लगभग भय के समान हैं और जैसा कि हम देखते हैं, अर्जुन विश्वरूप का दर्शन करते हुए वास्तव में भयभीत हो जाता है। भय की स्थिति में भगवान् से प्रेम का संबंध बढ़ाने की प्रेरणा नहीं होती। इसलिए, जो भक्ति योग के मार्ग पर चलते हैं उनके लिए श्रीकृष्ण का विश्वरूप महत्वपूर्ण नहीं है, यह केवल इतना ही दर्शाता है कि जब तक कोई विश्वरूप प्रदर्शित नहीं करे, तब तक उसे भगवान् के रूप में स्वीकार नहीं किया जाना चाहिए।

वास्तव में, कृष्ण के अलग-अलग अवतार हैं जो ब्रह्मांड में निर्धारित समय पर अवतरित होते हैं और इनका उल्लेख जयदेव गोस्वामी द्वारा इस प्रकार किया गया है -

वेदानुद्धरते जगन्ति वहते भूगोलमुद्विभ्रते ।  
दैत्यं दारयते बलिं छलयते क्षत्र-क्षयं कुर्वते ॥  
पौलस्त्यं जयते हलं कलयते कारुण्यं आतन्वते ।  
म्लेच्छान् मूर्छयते दशाकृतिकृते कृष्णाय तुभ्यं नमः ॥

हे कृष्ण, मैं आपको नमन करता हूं जो इन दस अवतारों के रूप में अवतरित हुए हैं। मत्स्य अवतार के रूप में आप वेदों को बचाते हैं एवं कुर्म अवतार के रूप में आप अपनी पीठ पर मंडार पर्वत को उठाते हैं। वराह अवतार के रूप में आप पृथ्वी को अपने दंष्ट्र पे उठाते हैं और नरसिंह अवतार के रूप में आप हिरण्यकशिपु दैत्य की छाती फाड़ते हैं। वामन के अवतार में, दैत्यराज बलि से केवल तीन कदम भूमि का अनुरोध करके, आप अपना आकार बढ़ाते हैं और उनसे सारा ब्रह्मांड लेकर, उन्हें छलते हैं। परशुराम के अवतार में आप सभी दुष्ट योद्धाओं का वध करते हैं, और रामचंद्र के रूप में आप राक्षसों के राजा रावण से युद्ध करते हैं। बलराम के रूप में आप एक हल धारण करते हैं जिसके द्वारा आप दुष्टों पर विजय प्राप्त करते हैं और यमुना नदी को अपनी ओर खींचते हैं। बुद्ध के रूप में आप उन सभी जीवों के प्रति दया दिखाते हैं जो इस दुनिया में पीड़ित हैं, और कलियुग के अंत में आप म्लेच्छों को चकित करने के लिए कलिक के रूप में प्रकट होते हैं। (गीत-गोविन्द १.१२)

जब हम श्रीमद्भगवद्गीता पढ़ते हैं तो हम देखते हैं कि कई जगहों पर उपदेशों को दोहराया गया है, परन्तु यह कोई त्रुटि नहीं, बल्कि भावातिरेक के कारण किया गया अलंकरण है। आचार्य बालदेव विद्याभूषण इस बात की पुष्टि करते हैं (प्रसादे विस्मये हर्षे द्वितिरुक्तम् न दुषयति) एवं भगवद्गीता के प्रसिद्ध भाष्यकार ए. सी. भक्तिवेदांत स्वामी प्रभुपाद, ने श्लोक १९ पर टिप्पणि करते हुए लिखते हैं - परम पुरुष भगवान् के छह ऐश्वर्य (महिमा) के विस्तार की कोई सीमा नहीं है। यहां और कई अन्य स्थानों पर पुनरुक्ति है, लेकिन शास्त्रों के अनुसार, श्रीकृष्ण की महिमा को बारंबार दोहराना कोई साहित्यिक कमि नहीं है। ऐसा कहा जाता है कि, हैरानी, विस्मय या हर्षोन्माद (असीम आनंद) में, बयानों का बार-बार दोहराया जाना कोई त्रुटि नहीं है।

द्यावापृथिव्योरिदमन्तरं हि व्याप्तं त्वयैकेन दिशश्च सर्वाः ।  
दृष्टाद्भुतं रूपमुग्रं तवेदं लोकत्रयं प्रव्यथितं महात्मन् ॥ ११-२० ॥

हे महापुरुष, उच्च लोकों और पृथ्वी के बीच के अंतरिक्ष सहित सभी दिशाओं में आप पूरी तरह से व्याप्त हो। आपके इस अद्भुत तथा भयानक रूप को देख कर तीनों लोक भयभीत हैं।

अमी हि त्वां सुरसङ्घा विशन्ति केचिद्गीताः प्राञ्जल्यो गृणन्ति ।  
स्वस्तीत्युत्त्वा महर्षिसिद्धसङ्घाः स्तुवन्ति त्वां स्तुतिभिः पुष्कलाभिः ॥ ११-२१ ॥

देवतागण आपमें प्रवेश कर रहे हैं और अत्यन्त भयभीत होकर वे हाथ जोड़े आपकी प्रार्थना कर रहे हैं। महर्षियों तथा सिद्धों के समूह “कल्प्याण हो” कहकर चुनिन्दा वैदिक स्तोत्रों का पाठ करते हुए आपकी स्तुति कर रहे हैं।

रुद्रादित्या वसवो ये च साध्या विश्वेऽश्विनौ मरुतश्चोष्मपाश्च ।  
गन्धर्वयक्षासुरसिद्धसङ्घा वीक्षन्ते त्वां विस्मिताश्चैव सर्वे ॥ ११-२२ ॥

रुद्रों, आदित्यों, वसुओं, साध्यों, विश्वेदेवों, दोनों अश्विनी कुमार, मरुतों, पित्रों, गंधणे, यक्षों, असुरों तथा सिद्धों सभी आपको देखते विस्मयाकुल हो गए हैं।

रूपं महत्ते बहुवक्त्रनेत्रं महाबाहो बहुबाहूरूपादम् ।  
बहूदरं बहुदंष्ट्राकरालं दृष्टा लोकाः प्रव्यथितास्तथाहम् ॥ ११-२३ ॥

हे महाबाहु! आपके इस अनेक मुखों, नेत्रों, बाहुओं, पैरों, पादों, उदरों, तथा अनेक दाँतों वाले भयानक विराट रूप को देखकर देवतागण सहित सभी लोक एवं मैं भी व्याकुल हो गया हूँ।

नमःस्पृशं दीसमनेकवर्णं व्यात्ताननं दीसविशालनेत्रम् ।  
दृष्ट्वा हि त्वां प्रव्यथितान्तरात्मा धृतिं न विन्दामि शमं च विष्णो ॥ १-२४ ॥

हे विष्णु! आकाश का स्पर्श करते आपका रूप, नाना ज्योर्तिमय रंगों से युक्त, उसके विशाल खुले मुखों और विशाल धधकती आँखों सहित देखकर मेरे अंदर कंपकंपी हो रही है, और मैं न तो अपना मानसिक संतुलन बनाए रख पा रहा हूँ, ना मैं शांत हो पा रहा हूँ।

दंष्ट्राकरालानि च ते मुखानि दृष्ट्वैव कालानलसन्निभानि ।  
दिशो न जाने न लभे च शर्म प्रसीद देवेश जगन्निवास ॥ ११-२५ ॥

आपके अनेक मुखों को उनके विकराल दाँतों सहित, प्रलयान्नि की भाँति प्रज्वलित देखकर मैं दिशा विहीन हो रहा हूँ, और अपना धैर्य खो रहा हूँ। मुझ पर दया कीजिए, हे देवेश्वर! हे जगन्निवास!

अमीच त्वां धृतराष्ट्रस्य पुत्राः सर्वे सहैवावनिपालसङ्गैः ।  
भीष्मो द्रोणः सूतपुत्रस्तथासौ सहास्मदीयैरपि योधमुख्यैः ॥ ११-२६ ॥  
वक्राणि ते त्वरमाणा विशन्ति दंष्ट्राकरालानि भयानकानि ।  
केचिद्विलभा दशनान्तरेषु सन्दृश्यन्ते चूर्णितैरुत्तमाङ्गैः ॥ ११-२७ ॥

धृतराष्ट्र के सारे पुत्र, उनके मित्रपक्ष, साथ में भीष्म, द्रोण, कर्ण एवं हमारी सेना के भी उत्तम योद्धाओं सहित, सभी आपके भयानक दाँतों वाले विकराल मुखों में प्रवेश कर रहे हैं। उनमें से कुछ के शिरों को तो मैं आपके दाँतों के बीच चूर-चूर होते देख रहा हूँ।

यथा नदीनां बहवोऽम्बुवेगाः समुद्रमेवाभिमुखा द्रवन्ति ।  
तथा तवामी नरलोकवीरा विशन्ति वक्राण्यभिविज्वलन्ति ॥ ११-२८ ॥

जिस तरह नदियाँ समुद्र की ओर बहती हैं और अंत में उसमें प्रवेश करती हैं, उसी तरह ये सभी प्रसिद्ध वीर भी आपके प्रज्वलित मुखों में प्रवेश कर रहे हैं।

यथा प्रदीप्तं ज्वलनं पतञ्जा विशन्ति नाशाय समृद्धवेगाः ।  
तथैव नाशाय विशन्ति लोकास्तवापि वक्राणि समृद्धवेगाः ॥ १५-२९ ॥

जिस प्रकार पतंगे अपने विनाश की ओर प्रज्वलित अग्नि में कूद पड़ते हैं, उसी प्रकार सभी लोक आपके मुखों में अपने विनाश की ओर तेजी से घुसे जा रहे हैं।

लेलिद्युसे ग्रसमानः समन्ताल्लोकान्समग्रान्वदनैर्बलद्धिः ।  
तेजोभिरापूर्य जगत्समग्रं भासस्तवोग्राः प्रतपन्ति विष्णो ॥ ११-३० ॥

आप बार-बार अपने हाँठों को चाटते हैं क्योंकि आप अपने प्रज्वलित मुखों से सभी दिशाओं से समस्त लोगों का भक्षण कर रहे हैं। हे विष्णु, आप अपनी तेजस्वी किरणों से संपूर्ण जगत में व्याप्त होकर उसे, जलाकर राख कर रहे हैं।

आख्याहि मे को भवानुग्रहरूपो नमोऽस्तु ते देववर प्रसीद ।  
विज्ञातुमिच्छामि भवन्तमाद्यं न हि प्रजानामि तव प्रवृत्तिम् ॥ ११-३१ ॥

हे देवताओं में श्रेष्ठ, हे भयानक रूप वाले, मुझे बतलाएं कि आप कौन हैं? मैं आपको नमन करता हूँ, कृपा करके मुझ पर प्रसन्न हों। हे सभी की उत्पत्ति के कारण, मैं आपको जानना चाहता हूँ, क्योंकि मैं आपके लक्ष्य को पूरी तरह से समझ नहीं पा रहा हूँ।

~ अनुवृत्ति ~

भगवान् के विराटरूप के दर्शन के बाद, अर्जुन व्यग्र हो चुका है और उस हृदय तक पहुंच गया है कि वह भूल रहा है कि श्री कृष्ण कौन हैं? अतः हम अर्जुन की स्थिति से समझ सकते हैं कि उनके द्वारा देखी गई महान् शक्ति, ऐश्वर्य, वैभव, तबाही और वीभत्सता पैदा करने वाला दृश्य, हमें परम सत्य के निकट नहीं ले जा सकता।

भक्ति-योग में निसर्ग की पूजा शामिल नहीं है। निसर्ग में सत्य है, परन्तु पहले यह जानकारी होनी चाहिए कि सत्य क्या है। केवल निसर्ग के चिंतन से सरल प्रशंसा के द्वारा कोई व्यक्ति आत्म-साक्षात्कार प्राप्त नहीं कर सकता है। जैसा कि पहले कहा गया है, परम सत्य का ध्यान अवैयक्तिक या अमूर्त नहीं हो सकता। इयामसुन्दर के रूप में, श्रीकृष्ण का व्यक्तिगत स्वरूप, जो तीन जगहों पर बांका है, वन के फूलों से अलंकृत है, उज्ज्वल पीतांबर वस्त्र पहने हुए हैं, यमुना के

## श्रीमद्भगवद्गीता

तट पर पेड़ के नीचे बांसुरी बजाते हैं, यह रूप ध्यान के लिए महान ऋषियों व योगियों में सबसे अधिक अभिलाषित वस्तु है। इस श्लोक में इसका वर्णन है -

**सत्पुण्डरीकनयनं मेघामं वैद्युताम्बरम् ।  
द्विभुजं ज्ञानमुद्राद्यं वनमालिनमीश्वरम् ॥**

मैं श्री कृष्ण का ध्यान करता हूँ, जिनकी सुंदर आँखें कमल के समान हैं, जिनकी छटा मेघश्याम है, जिनके वस्त्र विजली की तरह चमकीले हैं, जिनके दो भुजाएं हैं, जो सुंदर वनमाला से सुशोभित हैं, और जिनका हात ज्ञान-मुद्रा में है, जो दिव्य ज्ञान का संकेत देता है। (गोपाल-तापनी उपनिषद् ९)

**पीताम्बरं घनश्यामं द्विभुजं वनमालिनम्  
बर्हिर्बर्हाकृतापीडं शशिकोटिनिभाननम्  
घूर्णायमाननयनं कर्णिकारावतंसिनम्  
अभितश्वन्दनेनाथ मध्ये कुम्कुमविन्दुना  
रचितं तिलकं भाले विभ्रतं मण्डलाकृतिम्  
तरुणादित्यशङ्काशं कुण्डलाभ्यां विराजितम्  
घर्माम्बुकणिकाराजदर्पणाभकपोलाकम्  
प्रियामुखन्यस्तापाङ्गं लीलया योन्नतभृतम्  
ग्रभागन्यस्तमुक्तास्फुरदुच्छसुनासिकम्  
दशनज्योत्स्नया राजत्पक्विम्बफलाधरम्  
केयूराङ्गदसद्रलमुद्रिकाभिर् लसत्करम्  
विभ्रतं मुरली वामे पानौपद्म तथेतरे  
काञ्चिदाम स्फुरन्मध्यं नूपुराभ्यां लसत्करम्  
रतिकेलिरसावेशचापलं चपलेक्षणम्  
हसन्तं प्रियया सार्धं हासयन्तं च तां मुहुः  
इत्थं कल्पतरोमूले रत्नसिंहासनोपरि  
वृन्दारण्ये स्मरेत् कृष्णं संस्थितं प्रियया सह**

मैं दो भुजाओं वाले श्री कृष्ण का ध्यान करता हूँ, जो वर्षाकृतु की बारिश के बादल की तरह श्याम वर्णीय हैं, जो पीताम्बर वस्त्र में सुशोभित हैं, जो वनमाला पहने हुए एवं मोर पंख धारण किये हुए हैं, और कमलों से अलंकृत

हैं। उनका रूप करोड़ों चंद्रमाओं की भाँति भव्य है और उनकी आँखें चंचल हैं। उनके ललाट पर चंदन और कस्तूरी के लेप की तिलक है। उनके कर्ण की बालियां दो उगते हुए सूरज की तरह सुशोभित हैं, और पसीने से अभिषिक्त उनके गाल दो चमकदार दर्पणों की तरह हैं। उनकी आँखे उभरी हुई भौंह के साथ उनकी प्रेमिका के चेहरे की ओर चंचलता से झाँकती हैं। उनकी सुंदर उभरी हुई नाक को चमकदार मोती से सजाया गया है। उनके होंठ बिंबा के फलों की तरह लाल हैं और उनके दांतों की चांदनी से सुशोभित है। कंगन, बाजूबंद, और गहने के छल्ले से सुशोभित उनकी भुजाएं अत्यंत ही मनोरम हैं। अपने बाएं करकमलों में वे बांसुरी रखते हैं, उनकी कमर एक आकर्षक कमरबंद से सुशोभित है और उनके पैर सुंदर पायलों से अत्यंत ही मनोहर हैं। उनकी आँखें उनके दिव्य अमृत-लीलाओं के कारण चंचल रहती हैं, और वे अपने दोस्तों के साथ परिहास करते हैं, और इस प्रकार उन्हें बार-बार हंसाते हैं। वे अपने प्रिय के साथ वृदावन के वनों में कल्पवृक्ष के नीचे रत्नों से सुसज्जित सिंहासन पर बैठते हैं। इस प्रकार एक व्यक्ति को श्रीकृष्ण का मनन करना चाहिए। (सनत-कुमार संहिता ५४-६२)

### श्रीभगवानुवाच ।

कालोऽस्मि लोकक्षयकृत्प्रवृद्धो लोकान्समाहर्तुमिह प्रवृत्तः ।  
ऋतेऽपि त्वां न भविष्यन्ति सर्वे येऽवस्थिताः प्रत्यनीकेषु योधाः ॥ ११-३२ ॥

भगवान् श्री कृष्ण ने कहा - मैं काल हूँ, समस्त जगतों का महान विधंसक, और मैं यहाँ समस्त लोगों का विनाश करने के लिए आता हूँ। तुम इस युद्ध में भाग नहीं लोगे तो भी युद्ध के मैदान में सामने एकत्रित सभी योद्धा मारे जाएंगे।

तस्मात्त्वमुत्तिष्ठ यशो लभस्व जित्वा शत्रून् भुक्ष्व राज्यं समृद्धम् ।  
मयैवैते निहताः पूर्वमेव निमित्तमात्रं भव सव्यसाचिन् ॥ ११-३३ ॥

अतएव, उठो और यश पाओ! अपने क्षत्रुओं को जीतकर एक समृद्ध साम्राज्य का भोग करो! हे सर्वश्रेष्ठ धनुर्धर, तुम्हारे सभी क्षत्रु पहले ही मेरे द्वारा मारे जा चुके हैं - तुम केवल एक साधन हो।

द्रोणंच भीष्मंच जयद्रथं च कर्ण तथान्यानपि योधवीरान् ।  
मया हतांस्त्वं जहि मा व्यथिष्ठा युध्यस्व जेतासि रणे सपलान् ॥ ११-३४ ॥

द्रोण, भीष्म, जयद्रथ, कर्ण और अन्य वीर सैनिक मेरे द्वारा पहले ही मारे जा चुके हैं। डरो नहीं - युद्ध करो! तुम निश्चित रूप से इस युद्ध में अपने क्षत्रुओं पर विजयी होगे।

~ अनुवृत्ति ~

दुनिया का भाग्य तो अंततः निर्दिष्ट है, लेकिन आत्मज्ञान प्राप्त करके जन्म और मृत्यु के बंधन से इस संसार को पार करने का अवसर सभी जीवों के लिए खुला है। श्रीकृष्ण कहते हैं, क्षो अस्मि लोकक्षयकृत - “इस संसार का विनाश करने वाला शक्तिशाली ‘काल’ में ही हूँ” यही इस दुनिया का भाग्य है। समय ही सबसे बड़ा क्षत्रु है और अंततः यह सभी चीजों को नष्ट कर देता है। यह अजेय समय कृष्ण की शक्ति है।

मासर्तु दर्वी परिघट्टनेन।  
सूर्याग्निना रात्रि दिवेन्धनेन ॥  
अस्मिन महा मोहमये कटाहे ।  
भूतानि कालः पञ्चतीति वार्ता ॥

बारह महीने और छह मौसम खाना पकाने के करछी की तरह है। सूर्य खाना पकाने के लिए अग्नि है। दिन और रात सूर्य द्वारा खपतईंधन हैं। अज्ञानता खाना पकाने का बर्तन है और काल (समय) के द्वारा जीवित प्राणी उस बर्तन में पकाए जा रहे हैं। यही इस संसार की रित है! (महाभारत, वन-पर्व ३१३.११८)

१९४५ में जब न्यू-मैक्सिको में पहले परमाणु बम का परीक्षण विस्फोट किया गया था, तब परमाणु भौतिक वैज्ञानिक रॉबर्ट ओपेनहाइमर ने इस अध्याय के श्लोक ३२ को उस परिस्थिति का सही अन्दाज़ा लगाते हुए याद किया था। वर्षों बाद, जब परमाणु बम के विषय पर उनकी भावनाओं के बारे में पूछा गया, तब उन्होंने निम्नलिखित बयान दिया -

हमें पता था कि अब दुनिया वैसी ही नहीं रहेगी। कुछ लोग हँसे, कुछ लोग रोए, ज्यादातर लोग चुप थे। मुझे हिंदू धर्म ग्रंथ भगवद्गीता का वह वाक्य याद आया। जिसमें विष्णु, राजकुमार (अर्जुन) को समझाने की कोशिश कर रहे थे कि वह अपना कर्तव्य निभाए और उसे प्रभावित करने के लिए वे

अपने विराटरूप को दिखाते हैं और कहते हैं, “मैं ही मृत्यु हूँ, इस संसार का विनाश करने वाला।”

सचमुच, तब से लेकर अब तक, यह संसार एक धागे से लटकती हुई दिख रही है और, हमारा निकटस्थ विनाश (अपने हाथों से ही प्रतीत) किसी भी क्षण आ सकता है। ऐसा प्रतीत होता है की यही दुनिया का अंतिम भाग्य है - निश्चय ही सत्यानाश।

**सञ्जय उवाच ।**

एतच्छुत्वा वचनं केशवस्य कृताञ्जलिर्वेपमानः किरीटी ।  
नमस्कृत्वा भूय एवाह कृष्णं सगद्ददं भीतभीतः प्रणम्य ॥ ११-३५ ॥

संजय ने कहा - केशव (श्रीकृष्ण) की बातें सुनकर, कांपते हुए अर्जुन ने प्रार्थना में हाथ जोड़कर लङ्डखङ्डाते स्वर में श्रीकृष्ण से इस प्रकार कहा।

**अर्जुन उवाच ।**

स्थाने हृषीकेश तव प्रकीर्त्या जगत्प्रहृष्यत्यनुरज्यते च ।  
रक्षांसि भीतानि दिशो द्रवन्ति सर्वे नमस्यन्ति च सिद्धसद्घाः ॥ ११-३६ ॥

अर्जुन ने कहा – हे हृषीकेश, यह उचित ही है कि संपूर्ण संसार आपका सानंद गुण गान करे और आपके प्रति आकर्षित हो। किंतु दुष्ट भयभीत होकर सभी दिशाओं में पलायन करते हैं और सिद्धपुरुष आपको नमन करते हैं।

कस्माच्च ते न नमेन्महात्मनगरीयसे ब्रह्मणोऽप्यादिकर्ने ।  
अनन्त देवेश जगन्निवास त्वमक्षरं सदसत्तत्परं यत् ॥ ११-३७ ॥

हे महात्मा! आप इस ब्रह्माण्ड के रचयिता ब्रह्मा से भी अधिक श्रेष्ठ हैं। तो फिर सभी आपको सादर नमस्कार क्यों न करें? हे अनन्त, हे देवेश, हे जगन्निवास! आप नित्य हैं, अस्तित्वमान और अस्तित्वहीन के परे हैं।

त्वमादिदेवः पुरुषः पुराणस्त्वमस्य विश्वस्य परं निधानम् ।  
वेत्तासि वेद्यं च परं च धाम त्वया ततं विश्वमनन्तरूप ॥ ११-३८ ॥

आप आदि देव, सनातन पुरुष तथा इस संपूर्ण ब्रह्मांड के एकमात्र आश्रय हैं। आप ही ज्ञाता हैं और आप ही जानने योग्य हैं। आप परम आश्रय हैं और आपके अनंत रूप से सम्पूर्ण ब्रह्मांड व्याप्त है।

वायुर्यमोऽग्निवरुणः शशाङ्कः प्रजापतिस्त्वं प्रपितामहश्च ।  
नमो नमस्तेऽस्तु सहस्रकृत्वः पुनश्च भूयोऽपि नमो नमस्ते ॥ ११-३९ ॥

आप ही वायुदेव हो, आप ही यमराज हो, आप ही अग्निदेव हो, आप ही वरुणदेव हो, आप ही इस सृष्टी के रचयिता एवं सभी के प्रपितामह हो। मैं आपको सहस्रों बार पुनः पुनः प्रणाम करता हूँ।

नमः पुरस्तादथ पृष्ठतस्ते नमोऽस्तु ते सर्वत एव सर्व ।  
अनन्तवीर्यामितविक्रमस्त्वं सर्वं समाप्नोषि ततोऽसि सर्वः ॥ ११-४० ॥

आपको आगे, पीछे, तथा सभी दिशाओं से मेरा सादर प्रणाम है। हे असीम शक्ति के स्वामी, आप सर्वव्यापी हैं, अतः आप ही सब कुछ हैं।

सखोति मत्वा प्रसमं यदुक्तं हे कृष्ण हे यादव हे सखेति ।  
अजानता महिमानं तवेदं मया प्रमादात्प्रणयेन वापि ॥ ११-४१ ॥  
यच्चावहासार्थमसत्कृतोऽसि विहारशङ्खासनभोजनेषु ।  
एकोऽथवाप्यच्युत तत्समक्षं तत्क्षामये त्वामहमप्रमेयम् ॥ ११-४२ ॥

मैं आपकी महिमा से अनभिज्ञ था और आपसे सुपरिचित होने के कारण मैंने आपको अज्ञानवश सखा कहकर संबोधित किया। मैंने जो कुछ भी आकस्मिक रूप से आपसे कहा, जैसे कि ‘हे कृष्ण, हे यादव, हे मित्र’, और मैंने परिहास में या आपके साथ खेलते हुए, या आराम करते हुए, साथ-साथ खाते या बैठे हुए, कभी अकेले में तो कभी दूसरों के समक्ष, जो कुछ आपका अनादर किया है, उसके लिए, हे अचिन्त्य, हे अविनाशी, मेरे इन सभी कृत्यों के लिए मुझे क्षमा करें।

पितासि लोकस्य चराचरस्य त्वमस्य पूज्यश्च गुरुगरीयान् ।  
न त्वत्समोऽस्त्व्यभ्यधिकः कुतोऽन्यो लोकत्रयेऽप्यप्रतिमप्रभाव ॥ ११-४३ ॥

आप इस ब्रह्मांड के सभी चर तथा अचर प्राणियों के जनक हैं। आप परम पूज्य महान गुरु हैं। तीनों लोकों में न तो कोई आपके तुल्य है, न ही कोई आपके समान हो सकता है। हे अतुलनीय शक्ति के प्रभु, आपसे बढ़कर कोई कैसे हो सकता है?

तस्मात्प्रणम्य प्रणिधाय कायं प्रसादये त्वामहमीशमीज्यम् ।  
पितेव पुत्रस्य सखेव सख्युः प्रियः प्रियार्याहसि देव सोदुम् ॥ ११-४४ ॥

इसलिए हे प्रभु, मैं आपको साष्टांग प्रणाम करता हूँ और आपसे विनती करता हूँ मुद्दापर दया करें। हे कृष्ण, कृपया मेरे त्रुटियों को क्षमा करें जैसे एक पिता, मित्र या प्रेमी अपने पुत्र, मित्र या प्रिय को क्षमा कर देते हैं।

अदृष्टपूर्वं हृषितोऽस्मि दृष्ट्वा भयेन च प्रव्यथितं मनो मे ।  
तदेव मे दर्शय देव रूपं प्रसीद देवेश जगन्निवास ॥ ११-४५ ॥

पहले कभी न देखे गये आपके विराट रूप का दर्शन करके मैं हर्षित हो रहा हूँ, किन्तु मेरा मन साथ ही भयभीत भी गया है। अतः हे देवेश, आप कृपा करके अपना नारायण स्वरूप पुनः दिखाएँ जो समस्त जगत का आश्रय है।

किरीटिनं गदिनं चक्रहस्तं इच्छामि त्वां द्रष्टुमहं तथैव ।  
तेनैव रूपेण चतुर्भुजेन सहस्रबाहो भव विश्वमूर्ते ॥ १५-४६ ॥

हे विराट रूप! हे सहस्रभुज! मैं, आपके मुकुट पहने हुए ओर अपने हाथ में सुदर्शन चक्र धारण किये हुए चतुर्भुज रूप के दर्शन करना चाहता हूँ!

~ अनुवृत्ति ~

अर्जुन ने श्रीकृष्ण के विश्वरूप को देखकर उनकी प्रशंसा एवं स्तुति की, किन्तु तब उन्हें पछतावा भी हुआ कि उन्होंने कई बार श्रीकृष्ण को “हे कृष्ण,” “हे मित्र” का संबोधन करके या उनके साथ खेलते या आराम करते हुए उन्होंने उनका अनादर किया। अर्जुन ने अपने द्वारा किए गए किसी भी उल्लंघन के लिए कृष्ण से क्षमा याचना की और फिर कृष्ण से वे निवेदन करते हैं कि वह उन्हें अपना चतुर्भुज नारायण का रूप दिखाए।

अर्जुन का कृष्ण के साथ सार्व्य-रस में शाश्वत संबंध है, और वे केवल क्षण भर के लिए इसे भूल गए हैं। इसी तरह, सभी जीवों का कृष्ण के साथ एक मित्र, सेवक, माता-पिता या प्रेमी के रूप में एक शाश्वत संबंध है और इस संबंध को भक्ति-योग की प्रक्रिया के माध्यम से प्राप्त किया जा सकता है। कृष्ण का सभी जीवों के साथ संबंध शाश्वत है, इस बात की पुष्टि इस प्रकार की जाती है -

स नित्योऽनित्य सम्बन्धः प्रकृतिश्च परैव सा

सभी जीव नित्य हैं और अनंत काल से लेकर अनंत समय तक कृष्ण के साथ उनका संबंध शाश्वत है। (ब्रह्म-संहिता ५.२१)

श्रीभगवानुवाच।

मया प्रसन्नेन तवार्जुनेदं रूपं परं दर्शितमात्मयोगात् ।  
तेजोमयं विश्वमनन्तमाद्यं यन्मे त्वदन्येन न दृष्टपूर्वम् ॥ ११-४७ ॥

भगवान् श्रीकृष्ण ने उत्तर दिया - हे अर्जुन! मैंने प्रसन्न होकर अपनी दिव्य शक्ति के बल पर अपने इस तेजोमय, अपरिमित, मौलिक विश्वरूप के दर्शन करवाए हैं। यह रूप पहले कभी किसी ने नहीं देखा।

नवेदयज्ञाध्ययनैर्न दानैर्न च क्रियाभिर्न तपोभिरुप्रैः ।  
एवंरूपः शक्य अहं नृलोके द्रष्टुं त्वदन्येन कुरुप्रवीर ॥ ११-४८ ॥

हे कुरुश्रेष्ठ! इस नश्वर संसार में कोई भी इस रूप को देख नहीं सकता जो मैंने तुम्हारे सामने प्रकट किया है - न तो वेदों के अध्ययन से, न ही वैदिक यज्ञ के द्वारा, न दान से, न अनुष्ठान से, न ही कठोर तपस्या के द्वारा।

मा ते व्यथा मा च विमूढभावो दृष्ट्वा रूपं घोरमीद्भ्यमेदम् ।  
व्यपेतभीः प्रीतमनाः पुनस्त्वं तदेव मे रूपमिदं प्रपश्य ॥ ११-४९ ॥

मेरे इस भयानक रूप को देखकर भयभीत न हों। हतप्रभ न हों। शान्त चित्त होकर अपने इच्छित रूप के दर्शन करो।

सञ्जय उवाच ।

इत्यर्जुनं वासुदेवस्तथोक्त्वा स्वकं रूपं दर्शयामास भूयः ।  
आश्वासयामास च भीतमेनं भूत्वा पुनः सौम्यवपुर्महात्मा ॥ ११-५० ॥

संजय ने कहा - इस प्रकार बोलते हुए, वासुदेव श्रीकृष्ण ने अपना चतुर्भुज रूप दिखाया और फिर अपने सुंदर दो भुजाओं वाले रूप में प्रकट होकर भयभीत अर्जुन को शांत किया।

अर्जुन उवाच ।  
दृष्टेदं मानुषं रूपं तव सौम्यं जनार्दन ।  
इदानीमस्मि संवृत्तः सचेताः प्रकृतिं गतः ॥ ११-५१ ॥

## अध्याय ११ – विश्वरूपदर्शन योग

अर्जुन ने कहा - हे जनार्दन! आपके सुन्दर मानवी रूप को देखते हुए, मेरा मन शांत हो गया है और मैंने अपना आत्मसंयम पुनः प्राप्त कर लिया है।

श्रीभगवानुवाच ।  
सुदुर्दर्शमिदं रूपं दृष्टवानसि यन्मम ।  
देवा अप्यस्य रूपस्य नित्यं दर्शनकाक्षिणः ॥ ११-५२ ॥

भगवान् श्रीकृष्ण ने कहा - तुम मेरे जिस रूप को इस समय देख रहे हो, उसके दर्शन पाना बहुत दुर्लभ है। यहाँ तक कि देवता भी इस रूप के केवल द्वालक पाने के लिए सदा उत्सुक रहते हैं।

नाहं वेदैर्न तपसा न दानेन नचेज्यया ।  
शक्य एवंविधो द्रष्टुं दृष्टवानसि मां यथा ॥ ११-५३ ॥

तुम जिस रूप को देख रहे हो, उसे न तो वेदाध्ययन से, न कठिन तपस्या से, न दान से, न ही यज्ञो व अनुष्ठानों के माध्यम से देखना संभव है।

भक्त्या त्वनन्यया शक्य अहमेवंविधोऽर्जुन ।  
ज्ञातुं द्रष्टुं च तत्त्वेन प्रवेष्टुं च परन्तप ॥ ११-५४ ॥

हे अर्जुन, हे क्षत्रु विजयी! केवल अनन्य भक्ति द्वारा ही पूर्ण रूप में मुझे जाना जा सकता है। भक्ति-योग से ही मेरा साक्षात् दर्शन किया जा सकता है, मुझे प्राप्त किया जा सकता है।

मत्कर्मकृन्मत्परमो मद्भक्तः सङ्गवर्जितः ।  
निर्वैरः सर्वभूतेषु यः स मामेति पाण्डव ॥ ११-५५ ॥

हे पांडुपुत्र, मेरे भक्त जो मेरी सेवा करते हैं, मुझे सर्वोच्च मानते हैं, सभी भौतिक आसक्तियों का त्याग करते हैं, और जो सभी प्राणियों के लिए द्वेष से मुक्त हैं, वे मुझे प्राप्त कर सकते हैं।

~ अनुवृत्ति ~

चूंकि अर्जुन का श्रीकृष्ण के साथ नित्य संबंध है किन्तु वैकुंठ के नारायण के साथ नहीं, श्री कृष्ण समझ सकते थे की वे (अर्जुन) उनका नारायण रूप देखकर भी शांत नहीं हुए, इसलिए श्रीकृष्ण ने अपना मूल दो-भुजाओं वाला

## श्रीमद्भगवद्गीता

इयामसुन्दर रूप पुनः ग्रहण किया। जिनका कृष्ण से सीधा संबंध है, वे अत्यंत भाग्यशाली हैं, और वे कृष्ण के मूल रूप के अलावा किसी अन्य अवतार को देखकर कभी संतुष्ट नहीं होते हैं। इसी तरह की स्थिति बृहद्भागवतामृत नामक पुस्तक में वर्णित है, जिसमें गोप-कुमार ने स्वयं को वैकुण्ठ में नारायण के समक्ष पाया, परन्तु वहां वे संतुष्ट न हो सके। चूंकि गोप-कुमार का गोलोक वृद्धावन में कृष्ण के साथ एक शाश्वत संबंध है, यहां तक कि वैकुण्ठ में राजसी नारायण की उपस्थिति में भी उन्हें तृप्त नहीं किया जा सका। उन्होंने अपनी यात्रा को जारी रखा और अंत में वे परम धाम एवं श्रीकृष्ण के मधुर आलिंगन में पहुंच गए। यही कृष्ण के भक्त का सौभाग्य है, जो सदैव उनके द्वारा निर्देशित होते हैं और अंततः उनके मधुर आलिंगन को प्राप्त करते हैं।

ॐ तत्सदिति श्रीमहाभारते शतसाहस्र्यां संहितायां  
वैयासिक्यां भीष्मपर्वाणि श्रीमद्भगवद्गीतासूपनिषत्सु  
ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसंवादे  
विश्वरूपदर्शनयोगो नाम एकादशोऽध्यायः ॥

ॐ तत् सत् - अतः व्यास विरचित शतसहस्र श्लोकों की श्री महाभारत ग्रन्थ के भीष्म-पर्व में पाए जाने वाले आध्यात्मिक ज्ञान का योग-शास्त्र - श्रीमद्भगवद्गीतोपनिषद् में श्री कृष्ण और अर्जुन के संवाद से लिए गए विश्वरूपदर्शन योग नामक ग्यारहवें अध्याय की यहां पर समाप्ति होती है।

